प्रथम अध्याय

ज्ञानरंजनः व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रथम अध्याय

''ज्ञानरंजन : व्यक्तित्व एवं कृतित्व।''

1. जीवन परिचय -

1.1. जन्म -

ज्ञानरंजन का जन्म 21 नवंबर, सन् 1936 को हुआ। उनका जन्मस्थान 'अकोला' नामक शहर जो आज भी महाराष्ट्र में स्थित है। किंतु जन्मस्थान से अधिक वास्ता नहीं रहा है। ज्ञानरंजन अपनी पुस्तक 'कबाड़खाना' में कहते हैं - ''यद्यपि अकोला मेरा जन्मस्थान है। पर मैं अपने जन्मस्थान को एंटिक कागज पर छपे हुए पते के रूप से ज्यादा नहीं जानता था।''[1]

1.2. माता-पिता -

ज्ञानरंजन के माता और पिता के बारे में बहुत कम जानकारी मिलती है। जो भी मिलती है वह इधर-उधर बिखरी हुई है। ज्ञानरंजन ने अपना प्रथम कहानी संग्रह अपनी माँ के लिए समर्पित किया है। आपकी माँ आजीवन बीमार रहीं। 'कबाड़खाना' इस पुस्तक में ज्ञानरंजन माँ के बारे में लिखते हैं - ''मैं अपनी माँ के लिए विकल था और पिता, उनका एक आपरेशन कराके इसी सड़क से वापस लौट रहे थे। उनके चेहरे पर करूणा की छाप थी और देह फतह जैसी किसी खुशी से चंचल थी। वे मेरी माँ को सुरक्षित ले आए थे। इसलिए मैं उनको कृतज्ञता से देख रहा था। शल्य चिकित्सक से ज्यादा अपने पिता पर गर्व कर रहा था। इस मामूली से दृश्य को मैं आज तक भूल नहीं पाया।''[2]

ज्ञानरंजन के पिताजी का नाम रामनाथ सुमन था। वे प्रख्यात लेखक, कवि, आलोचक, शैलीकार के रूप में जाने जाते थे। ''छायावाद युग के सुप्रसिद्ध बायोग्राफर आलोचक। पत्रकार और शैलीकार थे और अरबी, फारसी, अंग्रेजी, ओल्कफेंच, बांगला, गुजराती और संस्कृत के गहरे जानकार थे।''[3] पिता गाँधीवादी विचारों से प्रभावित थे। परिवार में सभी को स्वदेशी कपड़े का प्रयोग करना पड़ता था। राजेन्द्र शर्मा

(रज्जू) कहते हैं - ''ज्ञान के पिता स्वर्गीय रामनाथ सुमन एक प्रख्यात लेखक तथा गाँधीवादी थे। अपने परिवार में उन्होंने कठोर अनुशासन बना रखा था। मुझे याद है कि उनके घर में मिल के कपड़े का एक टुकड़ा भी नहीं मिल सकता था फलस्वरूप सभी को खादी पहनना मजबूरी थी चाहे इच्छा हो या न हो।''[4]

सुमन जी ने अनेक पुस्तकें लिखी हैं। उनके विचार आधुनिक थे उन्होंने कभी भी अपने विचार अपने पुत्रों पर लादे नहीं हैं, उन्हें विचारों का स्वातंत्र्य दिया था। राजेन्द्र शर्मा कहते हैं - ''सुमन जी अपने जीवन भर कट्टर गाँधीवादी रहे और कभी भी उन्होंने मिल के कपड़े का प्रयोग नहीं किया किंतु बच्चों के बड़े होने पर उनकी इच्छाओं का दमन भी नहीं किया, विरोध (मौन या मुखर) चाहे जितना रहा हो फिर भी ज्ञान ने एम्. ए. पास कर लेने के बाद भी किसी बात की जिद नहीं की और उसी अनुशासन में बना रहा।''[5] सुमन जी ज्ञानरंजन के साथ खुले दिल से कभी नहीं बोलते। ज्ञानरंजन अपनी 'कबाड़खाना' पुस्तक में लिखते हैं - ''तीस साल तक जबरदस्त मौन जैसी हालत हमारे बीच रही।''[6]

पिता सुमन जी ने भी जीवन में अनेक संकटों, दु:खों को झेला है। ज्ञानरंजन लिखते हैं - ''सुमन जी कभी डगमगाते नहीं थे। वे ठान कर और साध के चलते थे। कई बड़ी दुर्घटनाएँ हुई, कई लंबे जीवन संघर्ष चले, कलकत्ता बैंक फैल हुआ, सारी कमाई गई और माँ आजीवन बीमार रही, पर कभी चींटी की तरह, कभी कछुए की तरह और कभी हाथी की तरह वे चलते ही रहे। उन्होंने पूरे देश को घूमा देखा था और कच्ची उम्र से ही मुझे यायावरी सिखाई।''[7] सुमन जी के बारे में ज्ञानरंजन कहते हैं - ''वे मुझे साहित्यकार कभी नहीं दिखे, आपने रूप विधान में, न वस्त्रों से, न वेश से, न चाल से सभी तरह से वे साधारण और पुष्ट थे। एक पतंग से ज्यादा वे उडे नहीं और एक पतंग कितना उड़ सकती है। जबकि लोग चील की तरह उड़ने-मंड़राने की काबिलियत रखते थे।''[8]

1.3. बचपन -

ज्ञानरंजन का जन्म अकोला शहर में हुआ और बचपन अलग-अलग जगह बीत गया। आपकी 'कबाड़खाना' इस पुस्तक में आप स्वयं लिखते हैं - ''मेरा बचपन अकोला, अजमेर और दिल्ली होते इलाहाबाद पहुँचा था।''[9] उनका बचपन देखनेवाले राजेन्द्र शर्मा (रज्जू) कहते हैं - ''उसके बचपन का चेहरा याद आता है,

एक दुबला सा पतला सा मामूली किस्म का लड़का जिसमें उस वक्त किसी विशेषता की संभावना नजर नहीं आती थी।''[10] आप बचपन में हमेशा आलसी रहते थे, भूल जाना आपकी आदत बन गई थी। ज्ञानरंजन स्वयं अपनी 'कबाड़खाना' पुस्तक में कहते हैं - ''कभी बटुआ नहीं रखा जेब में और घडी नहीं रही कलाई पर। जब-जब छाता लेकर चले तुरंत गुमा। जूतों से पैर छाले-छाले हो जाते थे। कुत्ता नहीं पाला और रूमाल नहीं रखा। आसपास डॉक्टर का नहीं रहना कभी खला नहीं। मुंडेर पर सोए, गाना गाया, चांदनी देखी और चाँद को देखकर कभी दु:खी नहीं हुए। क्रिकेट कभी नहीं खेला।''[11] परिवार साधन सुविधाओं से समृद्ध था। आप अपनी पुस्तक 'कबाड़खाना' में लिखते हैं - ''यह घर जैसा भी रहा हो पर इसमें बाहर जाने के लिए पाँच दरवाजे थे।''[12] और आगे लिखते हैं ''हमारे घर आम, अमरूद, कटहल, अनार, बेल, आंवला, पीपल सब तरह के पेड़ थे। इसके बीच एक घर था।''[13] यही पेड़, पीपल, घर उनकी कहानियों में कभी 'मनहूस बँगला' तो कभी 'अमरूद का पेड़' बनकर आते हैं।

1.4. बड़े भाई -

ज्ञानरंजन परिवार में सबसे छोटे हैं। आपके बड़े भाई का नाम श्रीरंजन है। उनकी शिक्षा एम्. ए. तक हुई है।

1.5. शिक्षा-दीक्षा -

ज्ञानरंजन का बचपन अलग-अलग जगह बीता इस कारण उनकी प्राथमिक शिक्षा कहाँ हो गई इसका ठोस प्रमाण नहीं है। उनकी एम्. ए. की और बी. ए. की शिक्षा इलाहाबाद विश्वविद्यालय में हुई है। पिता लेखक होने के कारण उनपर बचपन से ही अच्छे संस्कार थे। उनके घर हिंदी के महान विद्वानों का आना-जाना था, उनके साथ गप्पे लड़ाना और कविताएँ लिखकर उन्हें दिखाना, महाविद्यालयीन जीवन से ही शुरू था। पिताजी घंटो पढ़ाई करते थे। पिताजी को मिलने रामकुमार वर्मा, भुवनेश्वर, धर्मवीर भारती, मार्कंडेय, जगदीश गुप्त आदि विद्वान आया करते थे। ज्ञानरंजन को महाविद्यालयीन जीवन में भी अर्थिक समस्या का सामना करना पड़ा था। राजेन्द्र शर्मा कहते हैं - ''यही बात जेब खर्च पर भी लागू होती थी और ज्ञान की जेब अक्सर

खाली होती थी.... किंतु ज्ञानरंजन एम्. ए तक भी खादी के कमीज या कुर्ते और पायजामें में रहे।"[14] फिर भी पिताजी का विरोध उन्होने कभी भी नहीं किया।

विश्वविद्यालयीन जीवन में ज्ञानरंजन हमेशा मौज-मस्ती करते थे, इस कारण कभी-कभी दोस्तों की घबराहट भी उड़ जाती थी, यह सिर्फ हास्य-विनोद के लिए, इससे आगे कुछ नहीं। राजेन्द्र शर्मा कहते हैं - "ज्ञान मौज-मस्ती में आकर कभी-कभी ऐसी हरकतें भी कर बैठता था जिसके कारण सभी को घबराहट हो जाती थी। उसकी एक ऐसी ही आदत थी चोरी की।"[15] विश्वविद्यालय के आपके सहपाठियों में जयकुमार जलज, दूधनाथ सिंह, हरिशंकर शुक्ल आदि हैं। एम्. ए. पास करने के बाद आपने शोध-कार्य करने का प्रयास किया किंतु जल्दी ही उससे छुटकारा पा लिया। आपके शोध-निर्देशक डॉ. धर्मवीर भारती थे। आपकी शोध-कार्य विषयक उस समय की दृष्टि के विषय में राजेंद्र शर्मा कहते हैं - "उसका कहना था पढ़ने-लिखने के लिए डॉक्टर की डिग्री हासिल करना कोई जरूरी नहीं। रही नौकरी की बात उस पर भी वह सीरियस नहीं था।"[16]

विश्वविद्यालय में पढ़ते समय उनके संपर्क में बहुत-सी लड़कियाँ आई। कई लड़कियों के साथ प्रेम लीलाएँ भी की हैं। राजेन्द्र शर्मा कहते हैं - "युनिवर्सिटी में पढ़ते हुए.... कुछ लड़कियाँ भी उसके संपर्क में आई। कुछ तो काफी नजदीक। लेकिन ज्ञान ने कभी भी उसका नाजायज लाभ नहीं उठाया। इतना आगे बढ़ने का उसमें साहस ही नहीं था। जब कभी भी मामला आगे बढ़ा तो वह लड़कियों की ओर से ही, ज्ञान की तरफ से नहीं।"[17] आगे चलकर आपने प्रेम विवाह के लिए नौकरी का इस्तिफा दे दिया।

विश्वविद्यालय के समय से ही ज्ञान कविताएँ लिखने लगा था, यहीं से उसके अंदर का कवि बाहर आने के लिए प्रयास कर रहा था। राजेन्द्र शर्मा कहते हैं - "युनिवर्सिटी में पहुँच कर ही ज्ञान के भीतर सोई हुई इकाई ने करवट ली इन्हीं दिनों अस्तित्व बाहर आने के लिए मचल रहा था। इसी करवट ने 'अरूण शलभ नामक एक साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्था को जन्म दिया।"[18] जिसका उद्देश्य नए लेखकों को आगे बढ़ाना उन्हें प्रोत्साहित करना था, जो आज भी ज्ञानरंजन के पास हैं।

1.6. विवाह -

ज्ञानरंजन ने विवाह से पहले छोटी-मोटी प्रेम लीलाएँ भी की जो वक्त आने पर खत्म हो गई।

आगे चलकर आपने जिस लड़की के साथ प्यार किया उसके साथ विवाह भी किया। ज्ञानरंजन ने अपना विवाह भी अत्यंत साधारण तरीके से किया। उनके दोस्त राजेन्द्र शर्मा कहते हैं - "एक अत्यंत ही सादे तरीके से उसकी शादी हुई और शायद लोग विश्वास न करें कि अपनी शादी में ज्ञान पुरानी बुशशर्ट पैन्ट तथा फटी चप्पलों में शादी की वेदी पर बैठा था। हम लोगों के लाख कहने पर भी उसने अपने लिए नए कपड़े नहीं बनवाए थे। हाँ, दुल्हन के लिए अवश्य ही एक नया ब्लाउज और सस्ती सी नई साड़ी आई थी।"[19] इससे उनका सादगीपन तथा परंपरा के प्रति विद्रोह प्रकट होता है।

1.7. पत्नी -

ज्ञानरंजन की पत्नी का नाम सुनयना है। जो एक नामी वैद्य की बेटी हैं। जो परंपरा और रूढ़ियों को तोड़कर प्रेम विवाह के लिए तैयार हुई थी। राजेन्द्र शर्मा कहते हैं - "मैं यहाँ सुनयना के साहस और लगन की भी तारीफ करूँगा। हर कमी, हर खतरे और सिक्यूरिटी पर लात मारकर उसने ज्ञान का साथ दिया और आज मैं समझता हूँ उनका काफी सुखी परिवार है।"[20] दोनों के विचारों में तालमेल हैं, घर आये मेहमान का खुले दिल से स्वागत करना अपना कर्तव्य समझते हैं कहते हैं - "तरह-तरह के बहाने बना कर दोस्तों को प्रकार-प्रकार की चीजें खिलाना उसके स्वभाव में शामिल है। सुनयना, उसकी पत्नी भी कुछ ऐसे ही मिजाज की है। किसी भी मेहमान के आ जाने पर ये दोनों पति-पत्नी अत्यधिक प्रसन्नता का अनुभव करते हैं जबकि दुनिया इसके विपरीत की है, कुछ अपवादों को छोड़कर।"[21]

1.8. पुत्र तथा पुत्री -

ज्ञानरंजन के तीन संतान हैं। एक पुत्र और दो बेटियाँ हैं। पुत्र का नाम पाशा है जो आयु में सबसे बड़ा है। पुत्र पाशा इंजीनियर की नौकरी करता है। रवींद्र कालिया लिखते हैं - "ज्ञानरंजन का बेटा कोल इंडिया में इंजीनियर हो गया, जो हम लोगों की गोद में खेला करता था।"[22] पिताजी के समान ही वह साधारण रहता है। उसे भी पिताजी के समान दाढ़ी रखने का शौक है। रवींद्र कालिया कहते हैं - "दाढ़ी-दौड़ में ज्ञान का बेटा भी शामिल हो लिया। उसने पिता से विरासत में दाढ़ी ही नहीं पाई, कई और बातें सीख गया। महात्मा

ज्ञानरंजन की तरह उसने युवावस्था में अनेक चीजों का परित्याग कर दिया, जैसे जूते उतारकर खानदानी चप्पल ग्रहण की, सुट तहाकर वार्डरोब के हवाले कर दिया, आस्तीन के बटन बंद करना छोड़ दिया। सुनयना ने जिस तरह सुट-टाई जूते पहनाकर ज्ञानरंजन को सोवियत रूस के लिए रवाना किया था, बहुत चिचौरी करने के बाद पाशा को इंटरव्यू-भर के लिए सूट-टाई-जूते पहनने को राजी कर लिया।''[23] पिताजी के समान रहना पुत्र भी पसंद करता है भले ही इंजीनियर क्यों न हो।

ज्ञानरंजन के दो कन्याएँ हैं। उनके बारे में विस्तृत जानकारी नहीं मिलती है। ज्ञानरंजन ने अपनी 'कबाड़खाना' यह पुस्तक उन दो बेटियों के लिए समर्पित की है। लिखा है - ''वत्सला, बुलबुल ततइया, लाली और हगडुआ को जो एक ही लड़की के कई नाम हैं और वय से छोटी पाखी को जो इस संसार में बड़ी होती रहेगी और हम उसे दूर से देखते रहेंगे।''[24] इससे पता चलता है कि ज्ञानरंजन अपनी पुत्रियों से बेहद प्यार करते हैं।

1.9. निवास स्थान -

ज्ञानरंजन के घर का भी एक वैशिष्ट्य है। अकोला, दिल्ली, इलाहाबाद से जबलपुर इन अलग-अलग शहर में जीवन बीता है। आजकल जबलपुर में रहते हैं। उनके पिता का पैतृक संपत्ति के रूप में मिला मकान एक शांत जगह है, जहाँ सिर्फ शांति है। हृदयेश कहते हैं - ''ज्ञानरंजन का पैतृक मकान ट्रैफिक के शोरोगुल से मुक्त एक शांत इलाके में था। मकान क्या वह पुराने समय में चार दीवारी से घिरे बंगले जैसा एक आवास था जिसे ज्ञानरंजन ने अपनी कहानियों में कभी 'मनहूस बँगला' कहा है और कभी 'आश्रम' अहाते की कच्ची जमीन सूखी और कड़ी थी। यहाँ-वहाँ अमरूद, नीबू के दस-पांच पेड़ खड़े थे। आत्मीयता दुलार से वंचित उपेक्षित।''[25] सब से अलग और प्रकृति के सौंदर्य ने भरपूर सजाया हुआ था।

2. व्यक्तित्व -

2.1. अंतरंग व्यक्तित्व -

2.1.1. मिलनसार स्वभाव -

ज्ञानरंजन का स्वभाव मिलनसार है। ज्ञानरंजन से जो भी व्यक्ति मिलता है तो वह उनका दोस्त

बन जाता है। काशीनाथ सिंह कहते हैं - "मैं यह देखकर दंग रह गया कि यह कम्बख्त तो आदमी नहीं चुंबक है। चाहे जिस शहर में जाओ, जिस भी नए लेखक से मिलो वह 'ज्ञानदादा' के बारे में बोले बगैर न मानेगा।"[26] ज्ञानरंजन जिस मुहल्ले में रहते हैं वहाँ के सभी लोग उनसे परिचित हैं, साधारण से साधारण व्यक्ति के साथ खुले दिल से बड़ी खुशी से बात करते हैं। आगे काशीनाथ सिंह कहते हैं - "मुझे यह देखकर हैरत हुई कि उसके अधिकांश रिश्ते साहित्य से बाहर के है। यही नहीं, वह मुहल्ले के रिक्शेवालों, ढेलेवालों, पान-बिड़ी वालों, परचून के दुकानदारों सब्जीवालों से उसी अधिकार और मुहब्बत से बात करता है, जैसे रमाकांत श्रीवास्तव या भगवत रावत से।"[27]

2.1.2. प्रशंसाहीन -

अच्छे काम की प्रशंसा की जाती है या मतलब के लिए भी प्रशंसा की जाती है। हर कोई प्रशंसा की चाह रखता है। ज्ञानरंजन को अपनी प्रशंसा पसंद नहीं है। वह जल्दी किसी का अहसान नहीं लेते। हर समय सोच विचार करके ही काम करते हैं। कभी-कभी लोग ज्ञान के बारे में गलतफहमियाँ भी निर्माण करते हैं। सुबोधकुमार श्रीवास्तव कहते हैं - "अपनी प्रशंसा से बचनेवाले ज्ञानरंजन मुझे कभी-कभी उल्टी खोपड़ी के इन्सान लगने लगते हैं। उनके आलोचक कह सकते हैं कि यह भी ज्ञानरंजन की एक अदा है।"[28]

2.1.3. स्वार्थ के गंध से रहित -

निस्वार्थी होकर समाज कार्य करनेवाले या एखाद संस्था चलानेवाले बहुत कम दिखाई देते हैं। निस्वार्थी लोग विरले हो गये हैं। हाँ, निस्वार्थी का चेहरा लगाकर स्वार्थ साधनेवालों की संख्या बढ़ती जा रही है। ज्ञानरंजन के पिता द्वारा 'अरूण-शलभ' नामक साहित्यिक और सांस्कृतिक संस्था स्थापित की थी। उसका कोई भी पद ज्ञानरंजन को नहीं था। पहले से ही उनका दृष्टिकोण विशाल रहा है, हर सदस्य को वह संस्था का जिम्मेदार मानते थे। राजेन्द्र शर्मा कहते हैं - "अरूण शलभ में पदाधिकारी भी थे किंतु ज्ञान के पास कोई पद नहीं था हालांकि सभी काम ज्ञान करता था या किसी से करवाता था। दरअसल ज्ञान अपने भीतर लेखक को यहीं से बाहर लाना चाहता था और यह भी चाहता था कि और लोग भी इसमें बने रहें इसीलिए थोड़ी-थोड़ी जिम्मेदारी सभी पर

रखी गई थी। मेरे ख्याल से उसने ऐसा इसलिए किया था कि थोडे बहुत सामूहिक रूप से उसकी बढ़ती हुई इकाई को बल मिले।''[29]

2.1.4. प्रचार की लालसा नहीं -

ज्ञानरंजन कभी अपने आप का प्रचार और प्रसार करने का प्रयास नहीं करते। उन्होंने आजतक अनेक गोष्ठियाँ, नाटकों और साहित्य सम्मेलनों में भाग लिया है किंतु स्टेज पर जाने से हमेशा बचते रहे हैं। हरिशंकर परसाई कहते हैं - ''कहीं दिखजाने की लालसा उनमें नहीं है। नाटक की तैयारी महीनों करायेंगे, सब इंतजाम करायेंगे, पर नाटक जब मंचित होगा तो ज्ञान नदारद होंगे। उसे लोकप्रियता की चाह को ज्ञान ने जीत लिया है जो आम लेखक की चाह होती है। इसीलिए ज्ञान हर कहीं छपने को उत्सुक नहीं। जल्दी-जल्दी लिखकर ढ़ेर लगा देने के उतावले नहीं। प्रेस में और मंच पर ठस जाने की कोशिश नहीं। मान्यता प्राप्त करने की जल्दी नहीं। अपने लेखन के प्रति अति मोह नहीं।''[30]

2.1.5. सत्यवादी -

सच्चाई का रास्ता बहुत पतला होता है, उस पर चलना कठिन होता है। उस रास्ते से जो चलता है उसे बहुत से संकटों का सामना करना पड़ता है, क्योंकि आज असत्य ही सत्यपर 'राज' कर रहा है। ज्ञानरंजन ने हमेशा सच्चाई के रास्ते पर चलने का प्रयास किया है। इस कारण उन्हें जीवन में अनेक संकटों का सामना करना पड़ा है। रवींद्र कालिया कहते हैं - ''ज्ञानरंजन के व्यक्तित्व का एक उजला पक्ष यह भी है कि वह झूठ नहीं बोलता। वह सत्यवादी है - सत्यवादी ज्ञानरंजन।''[31] हमेशा सच्चाई की ओर देखने पर अपने संबंधियों से भी दूर जाना पड़ा है। राजेन्द्र शर्मा कहते हैं - ''एक और बात से ज्ञान को चीढ़ है और वह है गलत तरीके से पैसा कमाकर बड़ा आदमी बनना। हमारे कुछ साथी ऐसे भी हैं जो तनखाह तो कम पाते हैं लेकिन उनका बैंक बैलेंस काफी है। निश्चित रूप से ये पैसा उनकी असल की कमाई का नहीं अब ऐसे लोगों से ज्ञान का कोई संपर्क नहीं रह जाता और भीतर ही भीतर वह उनके प्रति बेहद ठंड़ा हो जाता है। गलत ढ़ंग से पैसा बना कर उसकी शान बघारने के ज्ञान सख्त खिलाफ है।''[32]

2.1.6. संकटों का सामना -

हर एक मनुष्य को जीवन में संकटों का सामना करना पड़ता है। संकटों को सहकर जीना ही जीवन होता है। ज्ञानरंजन को अपने जीवन में जिस प्रकार मित्र मिले हैं उसी प्रकार शत्रु भी मिले हैं। अनेक बार उनके खिलाफ लिखा गया। उन्हें जेल में बंद करना चहा, जिसका उन्होने सहजता से सामना किया। सुबोधकुमार श्रीवास्तव कहते हैं - "ज्ञानरंजन के विरूद्ध साजिशे भी डट कर हुई। 'पहल' सम्मान समारोह के बीच उनके खिलाफ पर्चा बाँटा गया। एक बुजूर्ग लेखक को उनके विरूद्ध मोर्चा खोलने के लिए खड़ा कर दिया। साहित्यिक संम्मेलन में उनके और 'पहल' के विरूद्ध लेख छापने वाले अखबार की प्रतियाँ बांटी गई, अफसरशाही की प्रवृत्ति से ओतप्रोत कवि आलोचक ने नवभारत टाइम्स में लेख लिखकर उन्हें निशाना बनाया पर ज्ञानरंजन नाम का दाढ़ीवाला कथाकार कभी विचलित नहीं हुआ। अपनी गति पकड़े रहा। अकेले ही अपनी, अपने सिद्धांतों की आदर्श और लक्ष्य की लड़ाई लड़ता रहा, लड़ रहा है। लोग आतंकित हैं, चमत्कृत हैं, चौकन्नो हैं, सतर्क हैं और अभिभूत भी हैं।"[33]

2.1.7. समय की पाबंदी -

समय अमूल्य है। बीता पल पुन: नहीं आता। ज्ञानरंजन वक्त का हमेशा ख्याल रखते हैं। समय उनके लिए अनमोल है जो भी काम है वह सही वक्त पर करना अपना कर्तव्य मानते हैं। रवींद्र कालिया कहते हैं - "ज्ञान के आयोजनों में समय की पाबंदी कानून की तरह लागू कर दी जाती है। अगर सुबह नौ बजे गोष्ठी का कार्यक्रम है तो नौ बजकर पाँच मिनट पर नहीं ठीक नौ बजे गोष्ठी शुरू हो जायेगी।"[34] एक बार हाथ में लिया काम पूरा करके ही छोडते हैं चाहे कैसा भी संकट सामने आ जाए। हृदयेश लिखते हैं - "मुझे याद है कि कामतानाथ के सम्मान समारोह वाली संगोष्ठी के दिन ज्ञानरंजन के श्वसुर का किसी यात्रा में निधन हो गया था। उस खबर को ज्ञानरंजन ने फूटने नहीं दिया था और संगोष्ठी निर्धारित समय पर अपने सहज रूप में हुई थी। जब किसी के सामने बड़े लक्ष्य और उद्देश्य होते हैं और उन्हें वह अतिनिष्ठा और गंभीरता से लेता है, तब व्यक्तिगत त्रासदियाँ और हादसे वहाँ बेमायने हो जाते हैं, ऐसे प्रतिबद्ध लोगों के लिए व्यक्ति से बड़ी संस्था होती है।"[35]

2.1.8. फिजूल खर्ची -

रूपए की कीमत वही जानता है जो पसीना बहाकर उसे कमाता है, वह नहीं जान सकता जिसे मुफ्त में मिले हैं। ज्ञानरंजन फिजूल खर्च करते हैं किंतु पत्नी के कहने पर या किसी दुसरे व्यक्ति के विचार-विमर्श से नहीं। पत्नी के लाख कहने पर भी दीपावली के दिन नए घर में रोशनियाँ लगाने में नकार देने वाले और एका-एक उनका मन परिवर्तन हो जाता है तो हजारों रूपये खर्च करके घर में रोशनियाँ लगा देते हैं। रवींद्र कालिया कहते हैं - ''ज्ञान को फिजूल खर्च पसंद नहीं लेकिन मैंने देखा है, वह खुद काफी बड़ा फिजूल खर्ची है। शर्त सिर्फ यह है कि चीज उसे पसंद आनी चाहिए।''[36]

2.1.9. अपने शहर के प्रति आकर्षण -

जिस परिवेश में हमारा जीवन अधिक बीत जाता है चाहे वह गाँव हो, या शहर अथवा कस्बा हो उसकी ओर अधिक आकर्षण रहता है। ज्ञानरंजन को शहर के प्रति बड़ी रूचि है। ममता कालिया कहती हैं - ''शहर ज्ञान का प्रिय विषय है, और ज्ञान इस विषय की मिट्टी-मिट्टी से भली भाँति परिचित है।''[37] उनका लगभग आजतक का जीवन शहर में ही बीता है, इस कारण शायद उन्हें शहर के प्रति आकर्षण है। ज्ञानरंजन स्वयं अपनी पुस्तक 'कबाड़खाना' में कहते हैं - ''मेरा बचपन अकोला, अजमेर और दिल्ली होते इलाहाबाद पहुँचा था। इलाहाबाद के खुमार के अलावा मुझे किसी दुसरी जगह ने कभी इतना नहीं लुभाया।''[38] उनके जीवन में जो भी घटनाएँ घटित हुई हैं सभी शहर में हुई हैं। शहर उन्हें अपनी प्रेमिका की तरह आकर्षित करता है। ममता कालिया कहती हैं - ''ज्ञान अपने शहर को लेकर उसी तरह, उतनी ही तीव्रता से हर समय महसूस करते हैं, जितनी तीव्रता से कोई अपनी प्रेमीका के बारे में शुरू के दिनों में महसूस करता है.....। ज्ञान इसके रेशे-रेशे से परिचित है, ज्ञान इसकी रग-रग से प्यार करते हैं। यह शायद इसलिए है क्योंकि ज्ञान के लिए शहर, शहर नहीं एक निहायत निजी रहस्यमयी दुनिया है जिससे जुड़ा उनका बचपन है, किशोरावस्था है, प्रेम प्रसंग है, मोहभंग है, चंद अजीज है और कुछ निहायत नालायक किस्म के दुश्मन।''[39]

2.1.10 खाने के शौकिन -

हर व्यक्ति की खाने की चीजों की पसंद अलग-अलग होती है। जैसे ज्ञानरंजन को मिठाई अधिक पसंद है। जब से ज्ञानरंजन इलाहाबाद शहर में रहते थे तब से आज तक उन्हें मिठाई खाने का शौक रहा है। किसी शहर में जाते हैं तो पहले मिठाई की दुकान की ओर पहले जाते हैं। ममता कालिया कहती हैं - "इलाहाबाद मिठाइयों का शहर है और ज्ञानरंजन के पैदाइशी शौकीन। रेवड़ी से लेकर रबड़ी तक ज्ञान इस शहर का तमाम स्वाद पहचानते हैं।"[40] किंतु किसी भी चीज की अधिकता उच्छी नहीं होती उसका दुष्परिणाम भोगना पड़ता है, जो ज्ञानरंजन भोग रहे हैं। रवींद्र कालिया कहते है - "ज्ञान मिठाइयों से विरत हो चूका है बल्कि यह कहना भी गलत न होगा, कि मिठाइयों से मुहब्ब उसे बहुत महंगी पड़ी। वह मधुमेह की गिरफ्त में आ गया।"[41]

2.1.11. अच्छा पति -

ज्ञानरंजन अपना खुद का ख्याल कम रखते हैं। साधारण पोशाख में रहते हैं किंतु पत्नी सुनयना के बारे में उन्होने कभी कमियाँ नहीं की हैं। रवींद्र कालिया कहते हैं - "वहीं ज्ञान, जो स्वयं साधु-संन्यासियों की तरह रहता है, सुनयना के कपड़ों पर बहुत ध्यान देता है। मैंने सुनयना को आजतक लापरवाह पोशाख में नहीं देखा। ज्ञान ने उन्हें हमेशा गुड़िया की तरह सजे रहना ही सिखाया हो, लेकिन वह जब-जब इलाहाबाद से जबलपुर लौटता है, उसके सूटकेस में सुनयना के लिए एक से एक महंगी साड़ियों के उपहार होते हैं।"[42] मतलब वे अपनी पत्नी को हमेशा खुश रखने का प्रयास करते हैं।

2.1.12 सच्चा दोस्त -

सुख में सभी दोस्त पास आते ही हैं किंतु दु:ख में कोई नहीं आता। सुख दु:ख में जो सहयोग देता है वही सच्चा दोस्त होता है। ऐसे दोस्त आजकल विरले हो चूके हैं। मतलब के लिए दोस्ती करनेवाले अधिक हैं। ज्ञानरंजन का दोस्ती करने का तरीका अलग है। वह किसी के भी दोस्त बन सकते हैं और दुश्मन भी बन सकते हैं। राजेन्द्र शर्मा कहते हैं - "दोस्ती में वह न तो आदमी का पोजीशन देखता है और न उसकी शैक्षिक योग्यता। उसका दोस्त कोई भी हो सकता है। उसे आज भी बहुत साधारण लोगों के बीच बैठ कर गप्पे लगाते

हुए देखा जा सकता है। कभी-कभी तो सारा काम-काज छोड़कर उन्हीं के साथ मटरगश्ती में मशगूल हो जाता है लेकिन कभी भी उन पर अपने लेखक होने का रोब नहीं गालिब करता और ना ही इस बात का एहसास दिलाता है कि उनके साथ रहकर उनके ऊपर एहसान-सा कर रहा है। दर्जा बराबरी का होता है।"[43] उनके मददगार स्वभाव को लेकर हिंदी के विद्वान सुबोधकुमार श्रीवास्तव कहते हैं - "ज्ञानरंजन बेहद फक्कड़, मौजी, यारबाज और कुछ घीसू किस्म के इंसान हैं। उनका मित्र संसार विस्तृत है। अद्भुत है। हर तबके के लोगों से उनकी खासी दोस्ती है और दोस्ती का निर्वाह करना उनसे सीखे। उनकी तरह के मददगार विरले ही होंगे।"[44] किसी दोस्त ने गलतियाँ की तो उसे माफ नहीं करता किंतु दोस्ती के खातिर चाहे कितना भी नुकसान उठाने के लिए हमेशा तैयार रहता है। उनके दोस्त राजेन्द्र शर्मा कहते हैं - "ज्ञान दोस्ती करता है तो उसे आखीर तक निभाता है, जब तक कि कोई खास बात न हो जाय और दोस्तों के लिए वह सीमा से बाहर भी चला जाता है चाहे कितना ही नुकसान क्यों न हो।"[45] कभी-कभी ज्ञानरंजन दोस्तों पर नाराज होते हैं किंतु फिर समझदारी से उसे स्वीकारते भी हैं। हिंदी साहित्य के आलोचक सुबोधकुमार श्रीवास्तव कहते हैं - "ज्ञान जी के साथ एक दिक्कत यह जुड़ी हुई है कि उनके आज के दोस्त कल उनके विरोधी हो जाते हैं और कल के विरोधी आज हितैषी बन कर खड़े हो जाते हैं।"[46] ज्ञानरंजन दोस्ती करते हैं तो भरपूर करते हैं और नाराज हो जाते हैं तो एकदम हो जाते हैं। उनके दोस्त राजेन्द्र शर्मा (रज्जू) कहते हैं - "ज्ञान जब दोस्ती करता है तो भरपूर करता है और नाराज होता है तो एकदम से नाराज हो जाता है।"[47]

2.1.13. धीरज एवं ठोसपन -

यश संपादन के लिए आत्मविश्वास एवं धीरज महत्त्वपूर्ण है। कोई भी काम हो उस पर विश्वास होना जरूरी होता है। ज्ञानरंजन हमेशा धीरज से काम करते हैं, जो काम हाथ में लेते उसे पूरे विश्वास के साथ पूरा करते हैं। हर काम सोच-समझकर करते हैं। हरिशंकर परसाई कहते हैं - "ज्ञानरंजन चुपचाप धीरज से काम करते जाते हैं। कोई हड़बड़ी नहीं। प्रचार नहीं। यह धीरज उनके लेखन में भी है। कोई भी कहानी पढ़िए। इतने धीरज से, सहजता से बात कहीं जाती है कि कहीं कोई तनाव, हड़बड़ाहट, बड़बोल नहीं। लेखक को जो कहना है, उसे पूरी तरह जानता है। धीरज से कह देगा। उसे कहने की जल्दी नहीं है। काम में, आदमी को

समझने में, स्थिति के विश्लेषण में, निष्कर्षों में, ज्ञानरंजन का यह धीरज और ठोसपन है। बड़े गहरे जाकर, धीरे-धीरे चीज के सब पहलू ज्ञानरंजन समझेंगे तब करेंगे, बोलेंगे या लिखेंगे।"[48]

2.1.14. विविध क्षेत्र से संबंध -

ज्ञानरंजन सिर्फ कहानीकार ही नहीं हैं। उनका विविध क्षेत्र से संबंध है। वे साहित्य के सिवा दुसरे क्षेत्र में भी सहयोग लेते हैं। हिंदी साहित्य के व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई जी कहते हैं - "अपने कमरे के एकांत में अध्ययन और लेखन में लगे ज्ञान बाहर के सब कुछ का भी ध्यान रखते हैं - छात्र आंदोलन, मजदूर आंदोलन, सांस्कृतिक गतिविधि सबमें ज्ञान की रूचि और हिस्सेदारी रहती है। यह आदमी बहुत प्यारा और ठाठदार है।"[49] ज्ञानरंजन अपने कॉलेज जीवन में नाटकों में भाग लिया करते थे लेकिन उसमें अधिक रूचि न होने के कारण आगे नहीं बढ़ सके। उनके दोस्त राजेन्द्र शर्मा कहते हैं - "ज्ञान ने भी लगभग सभी नाटकों में भूमिकाएँ निबाही और खूब निबाही। मतलब यह कि ज्ञान का दखल नाटक में भी उसी वक्त से था जबकि अब तक उसने कोई नाटक नहीं किया था। यहीं नहीं ज्ञान ने कुछ दिनों तबला भी सीखा किंतु उसमें उतनी रूचि न होने के कारण छोड़ दिया।"[50]

2.1.15. तटस्थता -

कोई भी व्यक्ति जब तटस्थता से निर्णय लेता है तो उस पर कोई नाराज भी हो जाते हैं। जो भी है जैसा भी है कह देना चाहे सामने दोस्त हो, या दुश्मन यह उनकी आदत है। राजेन्द्र शर्मा कहते हैं - "जो भी हो जैसा कि मैंने ज्ञान को अपने हिसाब से पाया है, वो एक नेक आदमी है। अच्छा पति, अच्छा पिता, और अच्छा दोस्त है। मक्कारी उसे आती नहीं, साफ बात कहने का कायल है चाहे किसी को बुरा लगे या भला। जल्दी किसी के एहसान लेने के खिलाफ। कुछ बातें जरूर ऐसी हुई हैं जिससे मुझे परेशानी हुई लेकिन उन बातों के लिए ज्ञान का अधिकार था।"[51]

2.1.16. रूचि -

ज्ञानरंजन ने दो बार विश्व यात्रा की है। उन्हें संगीत और कविता पढ़ने की विशेष रूचि है। ज्ञानरंजन

यायावर है। लिखने में गद्य की तरफ अधिक रूझान है। रोहतांग से कन्याकुमारी तक कई बार देशाटन किया है।

2.1.17. सच्चा देश प्रमी -

आजकल समाज में परदेसी वस्तु तो प्रतिष्ठा का साधन बन चुकी हैं। स्वदेशी बस्तुओं से अधिक परदेसी वस्तुओं को प्रतिष्ठा दी जाती है। ज्ञानरंजन स्वदेशी वस्तुओं के प्रेमी हैं। उनके पिता रामनाथ सुमन कट्टर गाँधीवादी थे और जीवन के अंत तक रहे। ज्ञानरंजन आज भी खादी का कुर्ता और पायजामा पहनते हैं, इतना ही नहीं उनका पुत्र पाशा भी इंजीनियर हो गया है लेकिन परदेसी कपड़े नहीं पहनता। ज्ञानरंजन ने परदेस की यात्राएँ की हैं लेकिन वापस आते वक्त परदेसी कोई वस्तु नहीं लाते थे। रवींद्र कालिया कहते हैं - "रूस से लौटकर जब उसने घर का दरवाजा खटखटाया तो सुनयना यह देखकर आश्चर्यचकित रह गई। सामने वही चिरपरिचित असली इलाहाबादी ज्ञान खड़ा था। सूट जूते उसके सामान से बरामद हुए या नहीं यह कहना मुश्किल है।"[52]

2.1.18. षष्टब्दी -

ज्ञानरंजन के जीवन के साठ साल बीत चुके हैं। आजकल ज्ञानरंजन हमेशा बीमार रहने लगे हैं। उनका स्वास्थ ठीक नहीं रहता इस कारण आजकल हमेशा जेब में दवाइयाँ रखते हैं। रवींद्र कालिया कहते हैं - "अगर अब ज्ञान की जेब की तलाशी ली जाए तो जानते हैं क्या मिलेगा ? अगर आप सोच रहे हैं सिगरेट का पैकेट मिलेगा या पान पराग का पाऊच अथवा च्यूंगम तो आप धोखा खा जाएंगे। ज्ञान की जेब में मिलेगी एक निराली चीज - अनारदाना चूर्ण।"[53]

2.2. बाह्य व्यक्तित्व -

2.2.1. प्रभावी मुखाकृति -

हमेशा गंभीर चेहरा होता है, बाल पिछे मुड़े हुए होते हैं, सफेद दाढ़ी, खड़ी नाक है। मंजूर एहतेशाम कहते हैं - "खड़ी नाक, उपासी और शरारत के बीच कहीं एक कैफियत लिए गहरी चमकदार आँखे, करीने से सँवरें स्याह बाल और बहुत नकासत से तराशी गई स्याह दाढ़ी।"[54]

2.2.2. पहनावा -

हर व्यक्ति का अंतरंग व्यक्तित्व और बाह्य व्यक्तित्व होता है। अंतरंग व्यक्ति के साथ बाह्य व्यक्तित्व को भी महत्त्व दिया जाता है। आजकल व्यक्ति के बाह्य व्यक्तित्व को अधिक महत्त्व दिया जाता है। ज्ञानरंजन तो अति साधारण पहनावा पहनते हैं। ममता कालिया कहती हैं - "अभी कल ही की बात है, अगर आप इस शहर की गली लोकनाथ में एक मझोले कद के, गहन दाढ़ी बढ़ाए, नीली कमीज की आस्तीनों को कुहनियों तक चढ़ाए, साँवले लेकिन सौम्य, अक्खड़ लेकिन अलमस्त से आदमी को एक जेब से गजक दूसरी से मीठे परवल निकाल कर खाते-खाते नुक्कड़ के कुल्फीवाले की ओर टकटकी लगाकर निहारते-देखते तो निश्चित ही वह ज्ञानरंजन होते।"[55]

ज्ञानरंजन हमेशा सर्व सामान्य की तरह ही पहनावा पहनते हैं। हृदयेश कहते हैं - "अपने ढीले-ढाले पहनावे लस्टम-पस्टम रख-रखाव से ज्ञानरंजन एक बेरोजगार आदमी लगता है या फिर एक ऐसा व्यक्ति जिस पर आमदनी के मुकाबले जिम्मेदारी कहीं ज्यादा हो और जो ची कर रहा हो।"[56]

2.2.3. रहन-सहन -

व्यक्ति के रहन-सहन का प्रभाव उसके व्यक्तित्व पर पड़ता है। व्यक्ति किस प्रकार रहता है, किस प्रकार के कपड़े पहनता है यही अधिकतर देखा जाता है। दूधनाथ सिंह कहते हैं - "ज्ञानरंजन बहुत पवित्र और पारदर्शी लगता है, हालांकि वह दिनों नहीं नहाता और जूते कभी नहीं पहनता। चप्पलें घसीटता रहता है। उसके पैर हमेशा गंदे रहते हैं। उन दिनों भी वह ऐसे ही रहता था जब घनघोर प्यार में मुफ्तिला था। तब और अब में परिवर्तन यही है कि उसकी खूबसूरत काली दाढ़ी अब स्वच्छ-सफेद हो गई है और घुंघराले बाल थोडे कम। लेकिन उन दिनों तब हम एक ही मुहल्लें में रहते थे। बावजूद विचारों के बहिर्गमन के उसने अपना बोहेनियन रख रखाव बिल्कुल नहीं बदला।"[57]

ज्ञानरंजन अपने रहन-सहन की ओर इतना ध्यान नहीं देते। वह हमेशा आलसी रहा करते थे। रवींद्र कालिया कहते हैं - "सीने पर का बटन टूट जाय तो उसे परेशानी होने लगती है, क्योंकि कमीज के नीचे

बनियान पहनना तो उसने सीखा ही नहीं। वह चुपचाप बटन के स्थान पर स्टेपल कर लेगा, और कॉलेज चला जायेगा, भोपाल चला जाएगा।''[58]

2.2.4. दाढ़ी व्यक्तित्व का अंग -

हर व्यक्ति के व्यक्तित्व की पहचान में उसके व्यक्तित्व का एखाद गुण होता है उसी गुण के आधार पर उस व्यक्ति की पहचान बन जाती है जैसे यहाँ ज्ञानरंजन की दाढ़ी है। ज्ञानरंजन कॉलेज जीवन से दाढ़ी रखते हैं। आज बिना दाढ़ी के ज्ञानरंजन को पहचानने में कठिनाई होगी। राजेन्द्र शर्मा कहते हैं - ''ज्ञान के दाढ़ी रखने की भी एक कहानी है। दाढ़ी वह युनीवर्सिटी के समय से ही रखने लगा था। कुछ दोस्तों ने उसका मजाक उड़ाया और दाढ़ी करवाने पर जबरदस्ती होने लगी। ज्ञान जिद पकड़ गया और तबसे आज तक दाढ़ी उसके चेहरे से चिपकी हुई है। काफी अंतराल के बाद ज्ञान ने दाढ़ी मुंडवाने का इरादा भी किया लेकिन तब तक दाढ़ी उसके व्यक्तित्व का हिस्सा बन चुकी भी और अब शायद बिना दाढ़ी के ज्ञान ज्ञान नहीं नजर आएगा।''[39]

ज्ञानरंजन का बाह्य व्यक्तित्व और अंतर्गत व्यक्तित्व अलग है। ज्ञानरंजन का रहन-सहन सर्व सामान्य व्यक्ति के जैसा ही है लेकिन अपने कार्य ने उन्हें महान बना दिया है। हृदयेश कहते हैं - ''किंतु साहित्य के क्षेत्र में ज्ञानरंजन ने अपने लेखन संपादन और सामाजिक जनचेतना को प्रबुद्ध करनेवाली विभिन्न योजनाओं से जो यश अर्जित किया है, उन सबसे स्थिति बेहद ही सुदृढ़ है।''[60]

3. कृतित्व -

3.1. कृतित्व की पहचान -

साठोत्तरी कहानीकारों में ज्ञानरंजन का स्थान महत्त्वपूर्ण है। ज्ञानरंजन प्रथमत: (सन् 1953) कविताएँ लिखते थे। उनकी पहली लिखी कहानी और पहली प्रकाशित कहानियों के बारे में 'कबाड़खाना' में लिखते हैं - ''दिवास्वप्नी मेरी पहली प्रकाशित कहानी है। पहली लिखी कहानी 'मनहूस बँगला' थी जो 'ज्ञानोदय' में छपी थी पर किसी संग्रह में नहीं आई क्योंकि उसका शीर्षक और उसकी कथा अकस्मात फिल्मी लगने लगी थी।''[61]

लेखक जब लिखता है तो उसे मालुम नहीं होता कि आगे चलकर उन्हें यह प्रश्न पुछे जाएंगे की आपकी प्रथम कहानी कब प्रकाशित हुई या आपकी कहानी लिखने के पिछे किसकी प्रेरणा है। इस पर स्वयं 'कबाड़खाना' में लिखा है कि - ''यह रचना-प्रक्रिया बहुत सचेत व्यक्ति के सामने भी धीरे-धीरे खुलती है या भ्रामक चाकचौंध देती हैं। रचना-प्रक्रिया एक भूमिगत कबाड़खाना है। रचना-प्रक्रिया को जान लेने से लाभ होगा यह भी नहीं कहा जा सकता।''[62] ज्ञानरंजन अपने विश्वविद्यालयीन जीवन से ही लिखने की ओर मुड़े हैं राजेन्द्र शर्मा कहते हैं - ''यूनीवर्सिटी में पहुँच कर ही ज्ञान के भीतर सोई हुई इकाई ने करवट ली। इन्हीं दिनों उसका अस्तित्व बाहर आने के लिए मचल पड़ा था।''[63]

'दिवास्वप्नी' को भैरवप्रसाद गुप्त ने 'नई कहानियाँ' में छापा था। शुरू-शुरू में कहानी लिखकर विद्वानों को दिखाते थे। स्वयं कबाड़खाना में कहते हैं - ''सबसे पहले कमलेश्वर को मैंने अपनी एक साथ तीन कहानियाँ दिखाई।..... लगभग इसी के आसपास दो तीन कहानियाँ मैंने धर्मवीर भारती को दिखलाई जो मेरे पीएच्. डी. के गाईड थे।''[64] और आगे लिखते हैं कि - ''भैरव जी ने मेरी 'दिवास्वप्नी' छापी, कमलेश्वर ने 'फेंस के इधर और उधर' छापी, भीष्म साहनी ने मेरी 'संबंध' छापी।''[65] इस प्रकार हिंदी के दिग्गजों के द्वारा ही उनकी कहानियाँ प्रकाशित हुई हैं। स्वयं 'कबाड़खाना' में लिखते हैं - ''मेरी पहली कहानी 'मनहूस बँगला' और 'दिवास्वप्नी' ये दो कहानियाँ पूरी तरह हवाई ही हवाई थी। कमरे में उड़ाई गई पतंग थी।''[66]

ज्ञानरंजन की कहानियों का केंद्र बिंदु परिवार है। कहानियों में पारिवारिक विघटन, तनाव, संघर्ष, घुटन, प्रेम की विद्रुपता, यथार्थ जीवन, सैक्स और काम की समस्याएँ, राजनीति आदि का चित्रण प्रमुखत: मिलता है। मध्यवर्गीय जीवन का खोखलापन, विवशता, बेरोजगारी, रूढ़ि, परंपरा आदि का भी चित्रण किया है। उपर से देखें तो ज्ञानरंजन की कई कहानियाँ सेक्स की लगती हैं लेकिन वास्तव में वह उस विकृतियों का पर्दाफाश करती है जिसे हम नजर अंदाज करते हैं।

ज्ञानरंजन की रचना-प्रक्रिया के विषय में सुरेश सेठ लिखते हैं - ''ज्ञान ने कुछ कहानियाँ पहले सोच का नक्शा बना बाद में भरे गए रंगोंसी भी लिखी है। इन कहानियों में वह पहले थीम का निर्णय करते हैं फिर उसकी मौलिकता के प्रति निश्चिंत होकर उसके ऊपर कहानी का घर बनाते चले जाते हैं।''[67] आजकल लोग

कहते हैं कि ज्ञानरंजन लिखना भूल गया है कि किस प्रकार लिखते हैं। यह गलतफहमी है काशीनाथ सिंह कहते हैं - "तो यह है कि एक संपादक और संगठनकर्ता ज्ञान, लेखक होना तो उसने बीस साल पहले बंद कर दिया। उसके पास अनुभवों का जखीरा है लेकिन कलम कैसे पकड़ जाता है भूल गया है, उसे लोग कहते हैं, बदले हुए जमाने के साथ वह कदम नहीं मिला पा रहा है, मगर यह बात तो तब समझ में आती जब उसने कभी कदम बढ़ाने की कोशिश की होती।"[68]

काशीनाथ सिंह ज्ञानरंजन को "मध्यप्रदेश की प्रतिभाओं की नर्सरी कहते हैं।"[69] ज्ञानरंजन ने कहानियों में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बनाया है किंतु आज यही कहानियाँ उन्हें चुनौती बनकर खड़ी हैं। रवींद्र कालिया कहते हैं - "वास्तव में ज्ञानरंजन ने कहानी में जो कीर्तिमान स्थापित किए हैं, वह उसके लिए अब चुनौती से बनते जा रहे हैं। उसकी स्पर्धा अपनी पीढ़ी के लेखकों से नहीं अपने ही लेखन से है - ज्ञान ज्ञानरंजन से संघर्ष कर रहा है।"[70]

ज्ञानरंजन ने अब तक कोई उपन्यास या नाटक, एकांकी नहीं लिखा है। उन्होंने कहानियाँ लिखी जो कि हाथ की उँगलियों पर नापी जा सकती है। लेकिन साठोत्तरी कहानीकार के रूप में उनका हिंदी साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान है। अब तक के जीवन में उनका मिम्नलिखित साहित्य प्रकाशन में आया है -

3.2. प्रकाशित रचनाएँ -

3.2.1. कहानी: संग्रह -

(1) फेंस के इधर और उधर

(2) क्षणजीवी

(3) यात्रा

(4) सपना नहीं, प्रथम सं. 1977

3.2.2. रेखाचित्र -

(1) कबाड़खाना, प्रथम सं. 1997 -

ज्ञानरंजन ने एम्. ए. होने के तुरंत टीचरी की नौकरी स्विकार की थी और जल्दी ही इस्तीफा दे दिया था। बाद में अध्यापक की नौकरी के साथ 'पहल' नामक त्रैमासिक पत्रिका शुरू की जीसे आज 25 साल पुरे हो गए हैं।

ज्ञानरंजन मध्य प्रदेश प्रगतिशील लेखक संघ के अध्यक्ष हैं। साहित्य अकादमी से संबंद्ध है, नेशनल बुक ट्रस्ट तथा अनेक राष्ट्रीय संस्थाओं से संबंद्ध है। मध्य प्रदेश कला परिषद के सदस्य है तथा दक्षिण मध्य सांस्कृतिक केंद्र की शासीनिकाय के सदस्य हैं। वे एक अच्छे अनुवादक भी हैं। उनकी अनेक कहानियाँ विविध भारतीय और परदेसी भाषाओं में अनुवादित हुई हैं जैसे - अंग्रेजी, जर्मन, जापानी, रूसी और पोल। सैन फ्राँसिस्को, हामडलबर्ग, लंदन, लेनिनग्राद और पूर्वी यूरोप के अनेक विश्वविद्यालयों में कहानियाँ पाठ्यक्रम में रही हैं। पेग्विन्स लंदन की भारतीय साहित्य की एन्थालॉजी में कहानी का चयन हुआ है। एन. सी. इ. आर. टी. नेशनल बुक ट्रस्ट और साहित्य अकादमी द्वारा कहानियाँ प्रकाशित हुई हैं। ओसाका जापान में पूरा कहानी संग्रह 3 वर्ष पाठ्यक्रम में रहा है। भारत के एक दर्जन से ज्यादा विश्वविद्यालयों में उच्चत्तर अध्ययन के लिए कहानियाँ पठन-पाठन में शामिल है। और केंद्रीय विद्यालयों के साहित्य वर्ग के छात्रों के लिए कहानी पाठ्यक्रम का हिस्सा बन चुकी है। विविध भाषा के अनुवाद के द्वारा उनकी कहानियों को अनुवादित किया है जैसे - गार्डन सी रोडारमल, अरविंद कृष्ण मेहरोमा, एग्नेश्का और गिरिधर राठी आदि के द्वारा।

3.3. पुरस्कार से सम्मानित -

(1) सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार।

(2) साहित्य भूषण सम्मान।

(3) अनिलकुमार पुरस्कार।

(4) सुभद्राकुमारी चौहान पुरस्कार - अस्वीकृत किया था।

(5) मध्य प्रदेश का शिखर सम्मान।

3.4. संपादन कार्य -

ज्ञानरंजन ने 'पहल' नामक त्रैमासिक पत्रिका लगभग मई, 1968 में शुरू की है जो आज भी शुरू है। 'पहल' ने 25 साल का जीवन पूरा कर लिया है। अब तक 'पहल' के 60 अंक निकल चुके हैं। 'पहल' विषयक ज्ञानरंजन का दृष्टीकोण हमेशा विशाल रहा है। नए लेखकों, कवियों, आलोचकों को वे प्रथम स्थान देते हैं। अरिविंद त्रिपाठी 'पहल' विषयक कहते हैं - ''पहल के संपादक की पहले अंक से ही यह कोशिश झलकती रही है कि नए से नए रचनाकार को साहित्य जगत से परिचय कराया जाए। यह आकस्मिक नहीं है कि आज ज्ञानरंजन जिस शहर में जाते हैं वहाँ उनकी नजर बराबर युवा और युवातर रचनाकारों पर ही होती है। वे अपने स्वभाव में भी प्रतिष्ठित मठ और गढ़ प्रिय लेखकों से मिलने के बजाय किसी युवा लेखक से मिलना बात करना, उसकी साहित्यिक और व्यक्तिगत चिंताएँ जानना, सुनना और समाधान देना जैसे उनका साहित्यिक लक्ष्य हो।''[71]

ज्ञानरंजन ने 'पहल' को लेकर कभी समझौता नहीं किया। दोस्त हो या दुश्मन बड़ी तटस्थता के साथ व्यवहार किया है। इस तटस्थता के कारण कभी दोस्त उनके दुश्मन बने तो कभी दुश्मन उनके दोस्त बने। सुबोधकुमार श्रीवास्तव कहते हैं - ''ज्ञानरंजन एक दोस्त के नाते वे सहृदय व्यक्ति हैं - लेकिन (पहल) के संपादक के नाते बेहद सख्त हैं। जब रचनाओं का चयन करने बैठते हैं तो यारी दोस्ती को ताक पर रख देते हैं। इस कठोरता ने इनके विरोधी भी खड़े कर दिए, उन पर तरह-तरह से हमले किए गए पर ज्ञानरंजन ने 'पहल' को लेकर कोई समझौता नहीं किया।''[72] 'पहल' के लिए उन्होंने अपना कथाकार भी खो दिया और पूरा जीवन झोंक दिया है।

'पहल' पर शुरू के दिनों कई लोगों ने आरोप भी लगाए हैं। हरिशंकर परसाई कहते हैं - ''दुश्मनों ने भयंकर प्रचार किया कि 'पहल' आपातकाल का विरोध करती है, ज्ञानरंजन सी. पी. आई. एम्. एल. का आदमी है। ये लोग व्यापक हिंसा की तैयारी कर रहे हैं।''[73] इन्हीं लोगों ने आपातकाल के बाद यह अभियान चलाए कि '' 'पहल' आपात स्थिति का समर्थन करती थी।''[74] इतनी कठीण परिस्थितियों में भी ज्ञानरंजन नहीं डगमगाए धीरज और ठोसपन से काम करते रहे और उसी समय एक जबरदस्त निर्णय लिया मध्य प्रदेश शासन का

पुरस्कार अस्वीकृत किया। परसाई जी कहते हैं - ''जब 'पहल' के खिलाफ यह अभियान चल रहा था तभी ज्ञान ने दूसरा फैसला कर ड़ाला - म. प्र. शासन साहित्य परिषद का पुरस्कार ठुकराना। कारण - बुद्धिजीवियों का शासन द्वारा दमन। तात्कालिक कारण या प्रगतिशील लेखक संघ के पदाधिकारी जयदेव उपाध्याय की गिरफ्तारी।''[75] इससे स्पष्ट है कि ज्ञानरंजन को पुरस्कार से अधिक व्यक्ति की कीमत है।

'पुरस्कार' के विषय में ज्ञानरंजन को आकर्षण नहीं है। रवींद्र कालिया कहते हैं - ''वास्तव में ज्ञान की पुरस्कार लेने में कोई दिलचस्पी नहीं है। धीरे-धीरे उसकी रूचि पुरस्कार प्रदान करने में होती जा रही है। वह स्वयं एक संस्थान बनता जा रहा है। 'पहल' की ओर से उसने तीन वर्ष से 'पहल' सम्मान देना प्रारंभ किया है।''[76] सन् 1991 में कामतानाथ को पहल सम्मान मिला, सन् 1993 का हृदयेश को मिला, सन् 1994 का मंजूर एहतेशाम को मिला। इस प्रकार उन्होंने पुरस्कार देना शुरू किया है। कभी-कभी उनके इस धीरज और विश्वास को लेकर हिंदी के रामविलास शर्मा को आश्चर्य लगता है, ''ज्ञानरंजन अपने काम और लगन के पक्के हैं। एक बार वामपंची विचारधारा से जुड़े तो फिर छोड़ा नहीं। इतने लंबे समय से पत्रिका निकाल रहे हैं। हालांकि उनके पास ज्यादा तामझाम नहीं है, फिर भी जबलपुर जैसी जगह से वे 'पहल' जैसी पत्रिका निकाल रहे हैं, यह बहुत महत्त्वपूर्ण है।''[77]

निष्कर्ष -

ज्ञानरंजन का स्थान हिंदी के सन् 60 के बाद के कहानीकारों में महत्त्वपूर्ण है। वे मार्क्सवादी विचारों से प्रभावित हैं। जीवन की राह पर चलते समय कभी दुश्मन भी मिले जो आगे चलकर उनके दोस्त बने अथवा दोस्त भी कभी-कभी दुश्मन बन गए हैं। जब से कहानी लिखना बंद किया है 'पहल' के लिए जीवन अर्पण किया है। न कभी किसी का सहारा लिया न किसी के साथ समझौता किया 'पहल' को लेकर तो बिल्कुल नहीं सच्चाई की राह पर चले। व्यक्ति से बढ़कर संस्था को महत्त्व दिया। जो भी ज्ञानरंजन के पास जाता है दोस्त बन जाता है। तटस्थता उनका गुण रहा है चाहे दुश्मन हो या दोस्त, नए का स्वागत करना अपना स्वभाव है। एक सफल अध्यापक, संपादक, सच्चे दोस्त, कहानीकार, अच्छा पिता और पति के रूप में ज्ञानरंजन को जाना जाता है।

संदर्भ सूची

1. ज्ञानरंजन, कबाड़खाना, पृ. 10
2. वही, पृ. 9
3. वही, पृ. भूमिका
4. सं. सत्यप्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 20
5. वही, पृ. 20
6. ज्ञानरंजन, कबाड़खाना, पृ. 9
7. वही, पृ. 12
8. वही, पृ. 12
9. वही, पृ. 14
10. वही, पृ. 19
11. वही, पृ. 16
12. वही, पृ. 14
13. वही, पृ. 16
14. सं. सत्यप्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 20
15. वही, पृ. 22-23
16. वही, पृ. 23
17. वही, पृ. 24
18. वही, पृ. 20
19. वही, पृ. 24-25
20. वही, पृ. 25
21. वही, पृ. 25

22. सं. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 23

23. वही, पृ. 26

24. ज्ञानरंजन, कबाड़खाना, पृ. 5

25. सं. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 44

26. वही, पृ. 19

27. वही, पृ. 10

28. वही, पृ. 38

29. सं. सत्य प्रकाश मिश्र - कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 21

30. वही, पृ. 30

31. रवींद्र कालिया, सृजन के सहयात्री, पृ. 21

32. वही, पृ. 27

33. सं. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 37-38

34. रवींद्र कालिया, सृजन के सहयात्री, पृ. 18

35. सं. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 49

36. रवींद्र कालिया, सृजन के सहयात्री, पृ. 20

37. सं. सत्य प्रकाश मिश्र - कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 67

38. ज्ञानरंजन, कबाड़खाना, पृ. 14

39. सं. सत्य प्रकाश मिश्र - कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 64

40. वही, पृ. 64

41. सं. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 23

42. वही, पृ. 26

43. सं. सत्य प्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 25-26

44. सं. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 36

45. सं. सत्य प्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 25

46. सं. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 37

47. सं. सत्य प्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 27

48. वही, पृ. 29

49. वही, पृ. 31

50. वही, पृ. 22

51. वही, पृ. 27

52. सं. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 26

53. वही, पृ. 23

54. वही, पृ. 40

55. सं. सत्य प्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 64

56. सं. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 51

57. दुधनाथ सिंह, लौट आ ओ धार, पृ. 137

58. रवींद्र कालिया, सृजन के सहयात्री, पृ. 21

59. सं. सत्य प्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 23

60. सं. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 51

61. ज्ञानरंजन, कबाड़खाना, पृ. 40

62. वही, पृ. 99

63. सं. सत्य प्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 20

64. ज्ञानरंजन, कबाड़खाना, पृ. 40

65. वही, पृ. 102

66. ज्ञानरंजन, कबाड़खाना, पृ. 102

67. सं. सत्य प्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 110

68. सं. सत्य प्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 21

69. सं. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 21

70. वही, पृ. 24

71. वही, पृ. 64

72. वही, पृ. 30

73. सं. सत्य प्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 30

74. वही, पृ. 30

75. वही, पृ. 30

76. रवींद्र कालिया, सृजन के सहयात्री, पृ. 18

77. वही, पृ. 18